भारत में आधुनिकता और वैश्विकरण

श्री वाडसीभाई चौधरी
जी. डी. हाईस्कुल, विसनगर

सामाजिक विज्ञानों और खासकर समाजशास्त्र में आधुनिकता के बारें में कई विद्वानों नें अपने विचार रखें कई सिद्धाँत भी रचे फिरभी बार बार प्रश्न यह उठता है कि आखिर आधुनिकता कब तक । आधुनिकता के बारे में बहुत ज्यादा बहस मोर्डनिटी को लेकर जगह जगह गोष्ठिओं, परिगोष्ठिओं में बहुत हुई और होती रहेगी । कई सारे अभ्यासी भी अपने अपने अभ्यासों मे इस बात की झाँच करने में झुटे है । आखिर टडिशन क्या है,मोर्डनिटी क्या है,कैसे दोनों को मिलाया जाए? क्या आदमी अपने आप आधुनिक रहता है, या कि यह परिस्थितियों का दबाव है जो उसे आधुनिक बनाता है ? यदि वह सचमुच पुरे तौर से जागरूक है तो क्या उतनी जागरूकता आधुनिकता के लिए काफि है , या इसके अलावा भी कुछ चाहिए - जैसे कई सारे सवाल मौजुद है । आज आम आदमी भी मोर्डनिटी चाहता है । जो या तो किसी दुसरे को देखकर अपने आप में सुखी है या फिर टेलीविजन विज्ञापनों को देखकर, पढकर,सुनकर दंभ को अपनाया हुआ है । साठोत्तर युग में आधुनिकतावाद की चर्चा करीब करीब समाप्त हो चुकी थी, किन्तु आधुनिकता की चर्चा नें अपना नया रुप धारण कर नई गति पकड ली है ।

प्रवर्तमान में उत्तर आधुनिक शब्द का प्रचलन बढा है ,जिसमें मनुष्य और समाज दोनों को अलग अलग रुप में देखा जाने लगा है । एन्थेनी गिडेन्स एक ब्रिटिश समाजशास्त्री जो कि आधुनिकता के मूर्धन्य विद्वान माने जाते है । वे सोचते है कि पिछले तीस चालीस वर्षा में हमारें अस्तित्व को ईस आधुनिकता ने झकझोर दिया है । हमारी सुरक्षा की संपुर्ण भावना तिरोहित को गई है । इस अनिश्चितता ने हमारी पहचान को धूंधला कर दिया है । सँस्थाओं के प्रति अब हमारी कोइ आस्था नही थीं जो कुछ आस्था है वह बहुत कमजोर हैा आदमी अगर अपनी पहचान बनाए रखना चाहता है तो उसे तार्किक सुरक्षा अवश्य करनी चाहिए । आज से पचास साठ पहले हमारे देंश में एक आदिवासी के सामनें उभरें पहचान की कोइ समस्या नही थी । उसके लिए सब कुछ पूर्व निश्चित था । उसे जंगल में रहना था । केवल खरिफ की फसल लेना था आर पढाई लिखाई तथा नौकरी घंधों से उसे कोइ ताल्लुक नही था । आज इस आदिवासी के सामने सैंकडो समस्याए है । वह आधुनिकता के चौखट पर खडा है और कैरियर के रास्ते उसे चुनौतियाँ दे रही है । अब वर्तमान में उसकी क्या पहचान है ।

आज मनुष्य वैश्विक बननें के प्रयास में समाज और मानवीयता को भुलता जा रहा है । ईन दोनों पहलुओं से दुरी बनाता जा रहा है । उसके लिए आज अपना परिवार, राष्ट्र और समाज कोई माईने नही रखता । वैश्विकरण और खासकर पश्चिमीकरण से भारतीय समाज व्यवस्था पर अच्छा खासा प्रभाव पडा है । अमरिका,युरोपीय देशों की समाजव्यवस्था के मानदण्ड,मल्यों का प्रभाव हम भारतवर्ष के लागों पर बखुबी देख सकते ह,प्रतिदीन ईसकी गति भी बढती जा रही है हमारी सारी सामाजिक संस्थाए जैसे

परिवार, घर्म विवाह, आर्थिक संस्था, राजनैतिक सस्था एवं शिक्षा सस्था पर भी ईसका प्रभाव बरकरार है । बुनियादी रूप स उर्पयुक्त संस्थाओं का ढाँचा बदल सा गया है । फिरभी एक आम आदमी आधुनिकता को अपनानें को बेताब है । वैश्विकरण की बलिहारी से आज की परिवर्तनशील मानसीकता वालें समाज में हम एक प्रकिया को उदारीकरण या भुमंडलिकरण नामों से बुलाने का दोहरापन सिखते जा रहे है । भारतीय एवं कृषि आश्रित उधोगों पर इस प्रावधान का क्या असर पडेगा, इसे सहज ही समजा जा सकता है । हमारे देश के औसत कृषक या ग्रामवासी के लिए आज भी उसका परिवेश, उसके इर्द गिर्द के पशुप्राणी और पैड पौधें, प्रकृति के तव आदि उसके जिवन क अभिन्न अंग है । यह पैड पौधे उसे धरेलु इस्तेमाल के साधन और उपचार के सस्ते और सुलभ नुस्खे प्रदान करते है । किन्तु आज जिस तरह व्यक्ति दूरसँचार माध्यमों के झुठें और भ्रमझाल फैलानेवालें विज्ञापनों के चलतें अपनी सही पहचान खो रहा है ,वह अपने जीवन में नयेपन को ढूँढता है और पुरानेपन को भुलनें में पडा है । हमारे लिए हिटलरशाही राजनीति, बहुराष्ट्रीय कंपनियों की भरमार, विदेशों का दबाव, आतँकवाद और देश में चल रहे आंदोलन देश कों मजबुर किए हुए है, ऐसे में उत्तर आधुनिक समाज कई सारी परेशानिंया और सवाल लिए खडा है ।

देश में चल रहे आर्थिक सुधार की नीतियाँ, साँस्कृतिक पुनरुत्थान, उदारीकरण आदि कुछ ऐसे शब्द है । जो विश्व के मानव जीवन के आर्थिक जीवन मे बार बार प्रयुक्त होते है, इन शब्दों से लगातार अहसास दिलाया जाता है कि वैश्विकरण एक आवश्यक आर्थिक प्रकिया है, जिसकें बगैर झक्किसवों सदी में मानवजाति का कल्याण सम्भव नही । जातिप्रथा, घर्म और राष्ट के जटिल बन्धनों मे कैद ,सोचनें - समझनेंवालें गरीब, मध्यवर्गिय व्यक्ति को यह बात उचित और तर्कसँगत भी लगती है । पुँजी के निर्माण की प्रकिया मे पहला और अधिंकाश फायदा प्रारंभिक पजी लगानेवाले को होगा, फिर कुछ हद तक कय क्षमता रखनेवाला उपभोक्ता लाभान्वित होगा और अंत में कय क्षमताविहिन गरीब आदमी फटी फटी आखों से इस प्रकिया को देखता रह जायेगा । उसके भाग्य में लाभान्वित होना मुनासिब ही नही है इतना ही नही वह विज्ञापन की भ्रमझाल में फंसकर पैसे को भी खर्च कर देता है । आज पुजिंवादी भुमँडलिकरण का नेतृत्व पश्चिम के दश कर रहे है । उनके नेतृत्व मे अविकसीत और विकासमान दशों की प्राकृतिक संपदा, श्रमशक्ति, बौद्धिक संपदा, वित्तीय पुजी, बाज़ार और परमाणु शक्ति समेत उर्जा का इस्तेमाल वहुराष्ट्रीय कंपनियाँ और अन्य प्रकार की व्यापारिक कंपनियाँ के पक्ष में करना है । जो देश इस भुमँडलिकरण के सामने नतमस्तक हो गए है वे तो ठिक है, जो ऐसा करने में कतराते है या इनकार करतें है, वहां अमरिकी हितों का पोषण करनेवाली तानाशाही कायम करने की साजिस की गई है । आज विश्व के अधिकतर देशों में इस परिस्थिति का निर्माण हुआ, जिनमें इन्डोनेशिया, मिश्र, बाँग्लादेश, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, इराक, चिली, पेरू, बर्मा आदि देशों का नामोल्लेख किया जा सकता है । भुमँडलिकरण के इस दौर में जनतंत्र को कुचलने और नए नए प्रकार की तानाशाही थोपने की या पुजी के स्वार्थो का पोषण करती है । भुमँडलिकरण की डोर आज की महाशक्ति के हाथ में है और वह जो करकरा रही है वह जनतत्र विरोधी सरकारें करती है । स्वतंत्र देश को भी आज आत्म निर्णय के अधिकार से वंचित कर दिया जा रहा है । बीमा क्षेत्र में विदेशीं पूजीं निवेंश को छूट, बाजार, संशाधन ओर

वित्तीय संपदा के इस्तेमाल में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के माल के आयात को लेकर मुक्त कर देना, सब्सिडी कम करने से चिज़ों के दामों मे बढावा देना जनविरोधी आर्थिक नीतियाँ है ।

वैश्विकरण के नाम पर इस दुनिया मे प्रादेशिक खेमाबन्दि या ग्लोबल कार्टेलाइज़ेशन कहना अधिक उपयुक्त होगा । वैश्विकरण के दौर में कम्पिटीशन ही विकास का गुरुमंत्र है । वैश्विकरण या कि प्रादेशिक खेमाबन्दि के परिणाम स्वरुप बहुभाषी, बहुप्रादेशिक एवं बहुराष्ट्रीय परिवेशों में काम करनेवाले लोग सवाल करने लगे है कि इस सारी गहमागहमी में आखिर उनकी जड कहा है । युरोप के आर्थिक एकीकरण का एक प्रमुख उदेश्य यह है कि वहां गैर युरोपीय देशों द्वारा हो रहे आयात पर अंकुश लगाया जाए । अमरिकी संगठन और सार्क भी अपने अपने ढंग से यही काम कर रहे है । आने वाले भविष्य में बहुराष्ट्रीय कंपनियों का राज हो जाएगा । जहाँ मनुष्य एवं उनके द्वारा संचालित समाज का स्थान ढुंढना भी हमारे लिए कठिन हो जाएगा । इस का कारण आज सारी दुनियां मे जों अंतरराष्ट्रीय व्यापार हो तो दिखाइ दे रहा है, उसका एक तिहाइ हिस्सा बहु राष्ट्रीय कंपनियों का आंतरिक लेन देन मात्र है । जबकि दुसरा एक तिहाइ हिस्सा गिनी चुनी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के बिच सौदों से बना है और सिर्फ वचे हुए एक तिहाई हिस्से को वास्तव में अंतरराष्ट्रीय व्यापार की सज्ञा दी जा सकती है ।

वैश्विकरण एवं उदारीकरण की प्रकिया पिछले दो तीन दसकों से दुनिया के तमाम विकाशशील देशों मे अलग अलग पैमानों पर कार्यान्वित होती जा रही है । देश के उघोगो को अंतरराष्ट्रीय व्यापार की परिधि के भितर लानें के लिए कुछ आर्थिक सुधारों की आवश्यकता है । वैश्विकरण यानी कि विश्व का व्यापारीकरण एक हद तक इस दुनियां की विकासशील जनसँख्या को बहुराष्ट्रीय व्यापारिक शक्तियों का मोहताज बनाता जा रहा है ।

विज्ञान एवं टेक्नोलोजी पर बहुराष्ट्रीय कंपनियों का यह भयानक एकाधिकार अब वैश्विकरण के माहौल में सचमुच विश्वव्यापी और ग्लोबल होता जा रहा है । सवाल उठता है कि टेक्नोलोजी के इस अत्यंत महत्वपर्ण एवं मूलभूत सामाजिक किरदार को इस दुनिया की व्यवस्थाए कितनी प्राथमिकताए दे रही ह ? आज भारतोय समाज की भौतिक एवं अभौतिक संस्कृति में नवाचार एवं बदलाव हमें सूचित करते ह कि आने वाला वक्त इन तत्वों को बदलनें में और भी अधिक रोचकता प्रदान करेगा । बदलाव का यह दौर भारत के नागरीकों को नई चुनौतियाँ भी दे रहा है, क्या लोग इन बदलाव सहन करने को शक्तिमान है या आधुनिकता की आड में समाज में विपरीत स्थितियाँ भी पैदा हो रही है तो उनका समाधान जाचने का प्रयास भी होना लाजमी है । आज भी भारतीय समाज की एक तिहाई जनसंख्या गरीबी से त्रस्त है और एक झूंट रोटी के लिए दरबदर की ठोकरे खाने को बेबस ह । समाज का एक बहुत बडा वर्ग जो कि आधुनिकता को हमारी प्राचिन और समृद्ध सस्कृति के खिलाफ मानते है । फिर भी वह अनचाहे ही आधुनिकता को अपना लेतें है आज नौबत ऐसी आयी है कि इन सारी समस्याओं का समाधान हमें भारतीय नागरीक बनकर खोजना होगा तब ही कुछ बात बन सकती है । हमारे नीति निर्धारिक और जनप्रतिनिधीओं को भी अपनी सोच समाज़ोत्थान की और झुकानी होगी तब ही आधुनिकता के कुप्रभाव से युवा और समाज को एक नवनिर्मीत राष्ट्र की कमान आर सुनहरे भविष्य का ख्वाब दे सकते है ।